|| श्री स्वामी समर्थ ||

||मदन द्वादशी व्रत कथा - मत्स्य पुराण |

श्रीगणेशाय नमः । ऋषियोंने पूछा--सूतजी ! (दैत्योंकी जननी) दितिके पुत्र उनचास मरुत देवताओंके प्रिय कैसे बन गये ? तथा अपने सौतेले भाई देवताओंके साथ उनकी प्रगाढ़ मैत्री कैसे हो गयी 2॥ १॥

सूतजी कहते हैं--सुव्रत मुनियो! प्राचीनकालकी बात है, देवासुर-संग्राममें भगवान् विष्णु तथा देवगणोंद्वारा अपने पुत्र-पौत्रोंका संहार हो जानेपर दैत्यमाता दिति शोकसे विव्हल हो गयी | वह उत्तम भूलोकमें जाकर स्यमन्तपञ्कक्षेत्रमें सरस्वतीके मंगलमय तटपर अपने पतिदेव महर्षि कश्यपकी आराधनामें तत्पर रहती हुई घोर तपमें निरत हो गयी । उस समय उसने ऋषियोंके समान फलाहार पर निर्भर रहकर कृच्छ्रू-चान्द्रायण आदि व्रतोका पालन किया। इस प्रकार बुढ़ापा और शोकसे अत्यन्त आकुल हुई दिति सौ वर्षोतक उस कठोर तपका अनुष्ठान करती रही। तदनन्तर उस तपस्यासे सन्तप्त हुई दितिने वसिष्ठ आदि महर्षियोंसे पूछा—

“ऋषियो ! आप लोग मुझे ऐसा व्रत बतलाइये, जो पुत्र- शोकका विनाशक तथा इहलोक एवं परलोकमें सौभाग्यरूपी फलका प्रदाता हो।!' तब वसिष्ठ आदि ऋषियोंने उसे मदनद्वादशी-व्रतका विधान बतलाया, जिसके प्रभावसे वह पुत्रशोकसे उन्मुक्त हो गयी॥ २--७॥ ऋषियोंने पूछा--सूतजी ! जिसका अनुष्ठान करनेसे दितिको पुनः उनचास पुत्रोंकी प्राप्ति हुई, उस मदन- द्वादशी व्रतके विषयमें हमलोग भी सुनना चाहते हैं॥ ८॥

सूतजी कहते हैं-

-ऋषियो! पूर्वकालमें वसिष्ठ आदि महर्षियोंने दितिके प्रति जिस उत्तम मदनद्वादशी-व्रतका वर्णन किया था, उसीको आपलोग मुझसे विस्तारपूर्वक सुनिये। व्रतधारीको चाहिये कि वह चैत्रमासमें शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको श्वेत चावलोंसे परिपूर्ण एवं छिद्ररहित एक घट स्थापित करे। उसपर श्वेत चन्दनका अनुलेप लगा हो तथा वह श्वेत वस्त्रके दो टुकड़ोंसे आच्छादित हो। उसके निकट विभिन्न प्रकारके ऋतुफल और गन्नेके टुकड़े रखे जायँ। वह विविध प्रकारकी खाद्य-सामग्रीसे युक्त हो तथा उसमें यथाशक्ति सुवर्ण-खण्ड भी डाला जाय। तत्पश्चात् उसके ऊपर गुड़से भरा हुआ ताँबेका पात्र स्थापित करना चाहिये। उसके ऊपर केलेके पत्तेपर काम तथा उसके वाम भागमें शक्कर समन्वित रतिकी स्थापना करे। फिर गन्ध, धूप आदि उपचारोंसे उनकी पूजा करे और गीत, वाद्य आदिका भी प्रबन्ध करे। (अर्थाभावके कारण) गीत-वाद्य आदिका प्रबन्ध न हो सकनेपर मनुष्यको कामदेव और भगवान् विष्णुकी कथाका आयोजन करना चाहिये । पुन: कामदेव नामक भगवान् विष्णुकी अर्चना करते समय उन्हें सुगन्धित जलसे स्नान कराना चाहिये। श्वेत पुष्प, अक्षत और तिलोंद्वारा उन मधुसूदनकी विधिवत् पूजा करे। उस समय उन “विष्णुके पैरोंमें कामदेव, जङ्घाओंमें सौभाग्यदाता, ऊरुओंमें स्मर, कटिभागमें मन्मथ, उदरमें स्वच्छोदर, वक्ष:स्थलमें अनंग , मुखमें पद्ममुख, बाहुओंमें पञ्चशर और मस्तकमें सर्वात्माको नमस्कार है '--यों कहकर भगवान् केशवका सांगोपांग पूजन करे। तदनन्तर प्रात:काल वह घट ब्राह्मणको दान कर दे। पुनः भक्तिपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराकर स्वयं भी नमकरहित भोजन करे और ब्राह्मणोंको दक्षिणा देकर इस मन्त्रका उच्चारण करे--“जो सम्पूर्ण प्राणियोंके हृदयमें स्थित रहकर आनन्द नामसे कहे जाते हैं, वे कामरूपी भगवान् जनार्दन मेरे इस अनुष्ठानसे प्रसन्न हों।!॥ १९--२०॥ श्लोक - "प्रीयतामत्र भगवान् कामरूपी जनार्दनः। हृदये सर्वभूतानां य आनन्दोऽभिधीयते॥ २०"

इसी विधिसे प्रत्येक मासमें मदनद्वादशी व्रतका अनुष्ठान करना चाहिये |व्रतीको चाहिये कि वह द्वादशीके दिन एक फल खाकर भूतलपर शयन करे और त्रयोदशीके दिन अविनाशी भगवान् विष्णुका पूजन करे। तेरहवाँ महीना आनेपर घृतधेनुसहित एवं

समस्त सामग्रियोंसे सम्पन्न शय्या, कामदेवकी स्वर्ण-निर्मित प्रतिमा और श्वेत रंगकी दुधारू गौ अनंग (कामदेव)-को समर्पित करे (अर्थात् अनंग के उद्देश्यसे ब्राह्मणको दान दे)। उस समय शक्तिके अनुसार वस्त्र एवं आभूषण आदिद्वारा सपत्निक ब्राह्मणकी पूजा करके उन्हें शय्या और सुगन्ध आदि प्रदान करते हुए ऐसा कहना चाहिये कि "आप प्रसन्न हों।" तत्पश्चात् उस धर्मज्ञ ब्रतीको गोदुग्धसे बनी हुई हवि, खीर और श्वेत तिलोंसे कामदेवके नामोंका कीर्तन करते हुए हवन करना चाहिये। पुनः कृपणता छोड़कर ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये और उन्हें यथाशक्ति गन्ना और पुष्पमाला प्रदानकर संतुष्ट करना चाहिये। जो इस विधिके अनुसार इस मदनद्वादशी-व्रतका अनुष्ठान करता है, वह समस्त पापोंसे मुक्त होकर भगवान् विष्णुकी समताको प्राप्त हो जाता है तथा इस लोकमें श्रेष्ठ पुत्रोंको प्राप्त कर सौभाग्य-फलका उपभोग करता है। जो समर, आनन्दात्मा, विष्णु और महेश्वर नामसे कहे गये हैं, उन्हीं अनंगज भगवान् विष्णुका सुखार्थीको स्मरण करना चाहिये। यह सुनकर दितिने सारा कार्य यथावत् -रूपसे सम्पन्न किया (अर्थात् मदनद्वादशी व्रतका अनुष्ठान किया)॥ २१--२९॥

दितिके उस व्रतानुष्ठानके प्रभावसे प्रभावित होकर महर्षि कश्यप उसके निकट पधारे और परम प्रसन्नता- पूर्वक उन्होंने उसे पुनः रूप-यौवनसे सम्पन्न नवयुवती बना दिया तथा वर माँगनेको कहा। तब वर माँगनेके लिये उद्यत हुई दितिने कहा--'पतिदेव! मैं आपसे एक ऐसे पुत्रका वरदान चाहती हूँ, जो इन्द्रका वध करनेमें समर्थ, अमित पराक्रमी, महान् आत्मबलसे सम्पन्न और समस्त देवताओंका विनाशक हो।" यह सुनकर महर्षि कश्यपने उससे ऐसी बात कही--' शुभे ! मैं तुम्हें अत्यन्त ऊर्जस्वी एवं इन्द्रका वध करनेवाला पुत्र प्रदान करूँगा, किंतु इस विषयमें तुम यह काम करो कि आपस्तम्ब ऋषिसे प्रार्थना करके उनके द्वारा आज ही पुत्रेष्टि-यज्ञका अनुष्ठान कराओ। सुव्रते ! यज्ञकी समाप्ति होनेपर मैं (तुम्हारे उदरमें) इन्द्ररूपी शत्रुके विनाशक पुत्रका गर्भाधान करूँगा।' तत्पश्चात् महर्षि आपस्तम्बने उस अत्यन्त खर्चीले पुत्रेष्टि-यज्ञका अनुष्ठान किया। उस समय उन्होंने "इन्द्रशत्रूर्भवस्व--इन्द्रका शत्रु उत्पन्न हो '--इस मन्त्रसे विस्तारपूर्वक अग्निमे आहुति दी। (इस यज्ञसे देवताओंको रुष्ट होना चाहता

था, परंतु) वे यह जानकर प्रसन्न हुए कि दैत्यों और दानवोंको इस यज्ञफलसे विमुख होना पड़ेगा॥३०--३५॥

(यज्ञकी समाप्तिके बाद) कश्यपने दितिके उदरमें गर्भाधान किया और पुनः उससे कहा--"वरानने ! एक सौ वर्षोंतक तुम्हें इसी तपोवनमें रहना है और इस गर्भकी रक्षाके लिये प्रयत्न करना है। वरवर्णिनि! गर्भिणी स्त्रीको संध्याकालमें भोजन नहीं करना चाहिये। उसे न तो कभी वृक्षके मूलपर बैठना चाहिये, न उसके निकट ही जाना चाहिये। वह घरकी सामग्री मूल, ओखली आदिपर न बैठे, जलमें घुसकर स्नान न करें, सुनसान घरमें न जाय, बिमवटपर न बैठे, मनको उद्विघ्न न करे, नखसे, लुआठीसे अथवा राखसे पृथ्वीपर रेखा न खींचे, सदा नींदमें अलसायी हुई न रहे, कठिन परिश्रमका काम न करे, भूसी, लुआठी, भस्म, हड्डी और खोपड़ीपर न बैठे, लोगोंके साथ वाद-विवाद न करे और शरीरको तोड़े-मरोड़े नहीं । वह बाल खोलकर न बैठे, कभी अपवित्र न रहे, उत्तर दिशामें सिरहाना करके एवं कहीं भी नीचे सिर करके न सोये, न नंगी होकर, न उद्विघ्न चित्त होकर एवं न भीगे चरणोंसे ही कभी शयन करे, अमङ्गलसूचक वाणी न बोले, अधिक जोरसे हँसे नहीं, नित्य मंगलिक कार्योंमें तत्पर रहकर गुरुजनोंकी सेवा करे और (आयुर्वेदद्वारा गर्भिणीके स्वास्थ्यके लिये उपयुक्त बतलायी गयी) सम्पूर्ण ओषधियोंसे युक्त गुनगुने गरम जलसे स्नान करे। वह अपनी रक्षाका ध्यान रखे, स्वच्छ वेष-भूषासे युक्त रहे, वास्तु- पूजनमें तत्पर रहे, प्रसन्मुखी होकर सदा पतिके हितमें संलग्न रहे, तृतीया तिथिको दान करे, पर्व-सम्बन्धी व्रत एवं नक्त व्रतका पालन करे। जो गर्भिणी स्त्री विशेषरूपसे इन नियमोंका पालन करती है, उसका उस गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह शीलवान् एवं दीर्घायु होता है। इन नियमोंका पालन न करनेपर निस्संदेह गर्भपातकी आशंका बनी रहती है। प्रिये! इसलिये तुम इन नियमोंका पालन करके इस गर्भकी रक्षाका प्रयत्न करो | तुम्हारा कल्याण हो, अब मैं जा रहा हूँ।' दितिके द्वारा पतिकी आज्ञा स्वीकार कर लेनेपर महर्षि कश्यप वहीं सभी जीवोंके देखते-देखते अन्तर्धान हो गये। तब दिति महर्षि कश्यपद्वारा बताये गये नियमोंका पालन करती हुई समय व्यतीत करने लगी॥ ३६--४९॥

(इस कार्यकलापकी सूचना पानेपर) इन्द्र भयभीत हो उठे और तुरन्त देवलोकको छोड़कर दितिके निकट आ पहुँचे। वे दितिकी सेवा करनेकी इच्छासे उसके समीप ही रहने लगे। इन्द्र सदा दितिके छिद्रान्वेषणमें ही लगे रहे। ऊपरसे तो वे विनम्र, प्रशान्त और प्रसन्न मुखवाले दीखते थे, परंतु भीतरसे वे दितिके कार्योंकी कुछ परवाह न करके सदा अपने ही हित-साधनमें दत्तचित्त रहते थे। इस प्रकार सौ वर्षोंकी समाप्तिमें जब तीन दिन शेष रह गये, तब दिति प्रसन्नतापूर्वक अपनेको सफलमनोरथ मानने लगी। उस समय आश्चर्यसे युक्त मनवाली दिति नींदके आलस्यसे आक्रान्त होकर पैरोंको बिना धोये बाल खोलकर सिरको नीचे किये कहीं दिनमें ही सो गयी। तब दितिकी उस त्रुटीको पाकर शचीके प्राणपति देवराज इन्द्र उसके उदरमें प्रवेश कर गये और अपने वज्रसे उस गर्भके सात टुकड़े कर दिये। उन तूकड़ोंसे सूर्यके समान तेजस्वी सात शिशु उत्पन्न हो गये। वे रोने लगे। रोते हुए उन सातों शिशुओंको इन्द्रने मना किया, (परंतु जब वे चुप नहीं हुए, तब) इन्द्रने पुन: उन रोते हुए शिशुओंमें प्रत्येकके सात-सात तूकड़े कर दिये। उस समय भी इन्द्र दितिके उदरमें ही स्थित थे। इस प्रकार वे टुकड़े उनचास शिशुओंके रूपमें परिवर्तित होकर जोर-जोरसे रुदन करने लगे। इन्द्र उन्हें बारम्बार मना करते हुए कह रहे थे कि “मत रोओ।! (परंतु वे जब चुप नहीं हुए, तब) इन्द्रने मनमें विचार किया कि इसका क्या रहस्य है? किस धर्मके माहात्म्यसे ये सभी (मेरे वज्रद्वारा काटे जानेपर भी) पुन: जीवित हैं ? तत्पश्चात् ध्यानयोगके द्वारा इन्द्रको ज्ञात हो गया कि यह मदनद्वादशी व्रतका फल है। अवश्य ही श्रीकृष्णके पूजनके प्रभावसे इस समय यह घटना घटी है, जो वज़द्वारा मारे जानेपर भी ये शिशु विनाशको नहीं प्राप्त हुए। इसी कारण उदरमें स्थित रहते हुए एकसे अनेक (उनचास) हो गये। इसलिये अवश्य ही ये अवध्य हैं और (मेरी इच्छा है कि ये) देवता हो जाय। चूँकि गर्भमें स्थित रहकर रोते हुए इनको मैंने “मा रूदत'--मत रोओ--ऐसा कहा है, इसलिये ये “मरुत्! नामसे प्रसिद्ध होंगे और इन्हें भी यज्ञोंमें भाग मिलेगा। ऐसा कहकर इन्द्र दितिके उदरसे बाहर निकल आये और दितिको प्रसन्न करके उससे क्षमा-याचना करने लगे--' देवि !अर्थशास्त्रका आश्रय लेकर मैंने यह दुष्कर्म कर डाला है, मुझे क्षमा

करो।” इस प्रकार देवराजने मरुगणको देवताओंके समान बनाया और पुत्रोंसमेत दितिको विमानमें बैठाकर वे अपने साथ स्वर्गलोकको ले गये। विप्रवरो ! इसी कारण मरुद्रण यज्ञोंमें भाग पानेके अधिकारी हुए। उन्होंने असुरोंके साथ एकता नहीं की; इसीलिये वे देवताओंके प्रेमपात्र हो गये॥५०--६५॥

॥ श्री गुरुदत्तात्रेयार्पणमस्तु ॥

|| श्री स्वामी समर्थार्पण मस्तु||